प्रश्नः

''यदि साम्प्रदायिकवाद एक धब्बा है, तो विश्वासी लोग एक कैसे हो सकते हैं?''

उत्तरः

मसीह में विश्वास करने वाले लोग सैकड़ों कलीसियाओं में बंटे हुए हैं। मसीहियत में उतने ही ब्रांड मिल जाते हैं जितने टुथ पेस्टों के!

हम मानते हैं कि यह साम्प्रदायिकवाद सबसे पहले इसीलिए धब्बा है क्योंकि मसीह में विश्वास करने वाले लोग धार्मिक फूट के कारण दुर्भावना और झगड़े से बंट जाते हैं। दूसरा, यह इसलिए भी धब्बा है क्योंकि इससे लोगों को मसीहियत को ग्रहण करने में रुकावट आती है। तीन मिशनरी अलग-अलग शिक्षा लेकर अफ्रीका के एक कबीले में गए। कुछ महीनों बाद भी वहां कोई फल न मिला। तीनों मिशनरियों ने यह जानने के लिए कि कहां गड़बड़ थी, कबीले के सरदार को बुलाया। सरदार ने उनकी शिकायतें सुनकर उत्तर दिया, ''आप हमें यीशु के बारे में सिखाते तो हो, पर आप सब लोग अलग-अलग बातें सिखाते हो। पहले आप तीनों मिलकर यह फैसला कर लो कि यीशु की क्या शिक्षा है। फिर हो सकता है कि हम आपकी सुनें और आपकी बात मान जाएं।'' मसीह के अनुयायी होने का दावा करने वाले लोगों में धार्मिक फूट है बहुत से लोग उसके पीछे चलने से इन्कार कर देते हैं। किसी ने कहा है, ''मसीहियत में पाई जाने वाली फूट की कीमत हमें अविश्वासी संसार के रूप में चुकानी पड़ी है।''

साम्प्रदायिकवाद के एक धब्बा होने का मुख्य कारण यह है कि यह परमेश्वर की इच्छा के विपरीत है। यीशु ने प्रार्थना की थी, ''मैं केवल इन्हीं के लिए बिनती नहीं करता, परन्तु उन के लिए भी जो इनके वचनों के द्वारा मुझ पर विश्वास करेंगे, कि वे सब एक हों। जैसा

तू हे पिता मुझ में है, और मैं तुझ में हूं, ... इसलिए कि जगत प्रतीति करे, कि तू ही ने मुझे भेजा'' (यूहन्ना 17:20, 21)। पौलुस ने लिखा, ''हे भाइयो, मैं तुम से यीशु मसीह जो हमारा प्रभु है उसके नाम के द्वारा बिनती करता हूं, कि तुम सब एक ही बात कहो; और एक ही मत होकर मिले रहो'' (1 कुरिन्थियों 1:10)।

यदि हम इस बात से सहमत हैं कि साज़्प्रदायिकवाद एक धज़्बा है तो भी यह प्रश्न तो रहता ही है कि *मसीह में विश्वास करने वाले एक कैसे हो सकते हैं?* आइए एकता के दो विभिन्न ढंगों की तुलना करते हैं।

लोगों द्वारा अपनाया जाने वाला ढंग

एकता को बढ़ावा देने की इच्छा से लोग इन दो में से एक ढंग को अपनाते हैं। एक ढंग *सहयोग से एकता* की अवधारणा से मिलता है। अलग-अलग शिक्षाओं को मानकर, अलग-अलग साज़्प्रदायिक कलीसियाओं में रहते हुए लोगों ने असहमत होना मान लिया है। वे इस विचार पर तो ज़ोर देंगे पर अलग विचार होने पर ध्यान नहीं देंगे।

कई बार इस विचार के लोग प्रार्थना-सभाओं और बाइबल अध्ययन की सभाओं में इकट्ठे होते हैं। वे इस बात को भूल कर कि बहुत सी बातों पर उनमें मतभेद हैं और केवल उन शिक्षाओं पर चर्चा करते हैं जिन्हें सब लोग मानते हों। या वे कोई इन्टरडिनोमिनेशनल कलीसिया बना लेते हैं जिसमें बपतिस्मे, प्रभु भोज, कलीसिया के प्रबन्ध आदि के बारे में अलग-अलग विचारों वाले लोग आ सकें।

बड़े पैमाने पर यही ढंग कुछ कलीसियाओं द्वारा सहयोग करने के प्रयासों में भी देखा जा सकता है। कलीसियाएं अपने किसी प्रोजेज़्ट को पूरा करने के लिए सब मतभेदों को भूल जाती हैं। या डिनोमिनेशन कलीसियाओं की काउंसिलों में इकट्ठी हो जाती हैं। इन काउंसिलों में हर कलीसिया अपने विश्वास को बनाए रखकर सामाजिक कार्य या परोपकार या सुसमाचार के कार्य में मिलकर सहयोग करती है।

या इस ढंग में कोई गलती है? इसमें एक आकर्षण तो है ज़्योंकि हम सब दूसरे विश्वास वाले लोगों के साथ मिलने और उनके साथ सहयोग करने को अच्छा मानते हैं। लगता है कि इससे मसीही व्यवहार भी दिखाया जाता है।

समस्या यह है कि यह किसी समस्या का समाधान नहीं है। इससे वास्तविक एकता नहीं आती है। इस ढंग को अपनाना कालीन के नीचे से झाड़ू मारने जैसा है। बेशक हम ढोंग करें कि हमारी फूट से कोई फर्क नहीं पड़ता, पर फूट तो है, और साज़्प्रदायिकवाद की बुराई भी है।

सबसे आवश्यक बात यह है कि यह ढंग इसलिए गलत है ज़्योंकि इससे वह एकता नहीं मिलती, जो बाइबल हमसे चाहती है। हमारे प्रभु ने प्रार्थना की कि विश्वासी लोग वैसे ही एक हों ''जैसा तू हे पिता मुझ में है, और मैं तुझ में हूं'' (यूहन्ना 17:21)। पिता और पुत्र एक दूसरे के कितना निकट हैं? उनके उद्देश्य, योजना और सामर्थ पर ध्यान देकर देखें कि वे कितना एक हैं। ज़्या साज़्प्रदायिक समूहों के सहयोग से इस प्रकार की एकता पाई जा

सकती है ? बेशक नहीं! पौलुस ने कुरिन्थुस के लोगों को एकमत अर्थात एक ही मन और एक ही मत होने का आग्रह किया (1 कुरिन्थियों 1:10)। जब अलग-अलग नामों वाली, उद्धार के ढंगों की अलग-अलग शिक्षा देने वाली और अलग-अलग ढंग से आराधना करने वाली छह अलग-अलग कलीसियाएं सहयोग करने के लिए सहमत होती हैं तो ज़्या वे सब सहमत हैं ? ज़्या उनका एक ही मन और एक ही मत है ? नहीं उनका एक ही मन और एक ही मत नहीं है!

बाइबल के अनुसार होने वाली एकता ही वास्तविक है। और यह एकता शिक्षा और व्यवहार की है। सहयोग करके एकता करने की कल्पना से ऐसी एकता नहीं आ सकती।

धार्मिक फूट को दूर करने के लिए मनुष्यों द्वारा अपनाया जाने वाला दूसरा ढंग कलीसियाओं को आपस में मिलाकर व्यवस्था में एकता लाना है। इसे *समझौते से एकता* के रूप में माना जा सकता है ज़्योंकि इस संघ में आने वाली कलीसियाओं के लिए यह फैसला लेने के लिए कि एकीकृत कलीसिया का रूप कैसा होगा, समझौता करना आवश्यक है।

ज़्या इस ढंग में कोई बुराई है ? यह ''सहयोग से एकता'' की धारणा के विरुद्ध उठाई जाने वाली आपज़ि का जवाब देता है ज़्योंकि इससे वास्तविक एकता आती है। नई कलीसिया तो एक ही है। फिर भी, इस ढंग पर दो आपज़ियां उठाई जा सकती हैं।

एक समझौता करके की गई एकता से वह एकता नहीं लाई जा सकती, उससे एक कलीसिया नहीं बन पाएगी। कनैडा में ''यूनाइटेड चर्च'' बनाने के लिए तीन कलीसियाएं इकट्ठी हुईं। 1960 के दशक के आरज़्ज़ में जब हम कनैडा में थे, तो यूनाइटेड चर्च को सज़्भवत: सबसे बड़ी प्रोटेस्टेंट डिनोमिनेशन माना जाता था। पर कनैडा में यूनाइटेड चर्च के अलावा वैसी ही तीन अन्य कलीसियाएं भी थीं। जब वे सब आपस में मिल गईं, तो नाराज मण्डलियों और लोगों ने यूनाइटेड चर्च से बाहर रहकर अपनी पहले की डिनोमिनेशनों में रहना ही चुना। मैं यह मानता हूं कि एक दूसरी कलीसिया के साथ मिल जाने का लक्ष्य तीन कलीसियाओं को मिलाकर उनसे एक कलीसिया बनाना था। वास्तविक परिणाम यह हुआ कि जहां पहले तीन कलीसियाएं थीं अब वहां चार डिनोमिनेशनें हो गई हैं जिनमें उन तीन के *साथ* अब एक और नई डिनोमिनेशन अर्थात साज़्प्रदायिक कलीसिया, द यूनाइटेड चर्च बन गई है। वह मिलाना फूट से कहीं कम नहीं था।

एकता के ऐसे ढंग से समझौता करने पर एक और विपज़ि पैदा हो जाती है कि जब डिनोमिनेशन्स ''एक बड़ी कलीसिया'' बनाने के लिए आपस में मिल जाती हैं तो इस बात की कोई गारन्टी नहीं है कि वह ''एक बड़ी कलीसिया'' परमेश्वर को भाएगी। समझौता हमेशा मनुष्यों द्वारा बनाए गए विचारों और उनकी परज़्पराओं में होता है। उदाहरण के लिए, एक डिनोमिनेशन अर्थात साज़्प्रदायिक कलीसिया के प्रतिनिधि कहते हैं, ''हम कलीसिया के संगठन पर आप से समझौता कर लेंगे, *यदि* आप आराधना के ढंग पर हमसे सहमत हो जाएं।'' सच्चाई तक पहुंचने के लिए समझौता सबसे अच्छा तरीका नहीं है। और एकता से अधिक सच्चाई महत्वपूर्ण है। यीशु ने कहा, ''तुम सत्य को जानोगे, और सत्य तुज़्हें स्वतन्त्र करेगा'' (यूहन्ना 8:32)। गलत शिक्षा को मानना और उस पर चलना, चाहे वह एकता के

नाम पर ही हो, किसी भी प्रकार परमेश्वर को प्रसन्न करने वाला नहीं हो सकता।

यदि हम उस आधार पर जो *हम* सोचते हैं, समझौता करके एक होने की शुरुआत करते हैं, तो हम सचमुच ''एक बड़ी कलीसिया'' में एक हो सकते हैं। पर यदि वह ''एक बड़ी कलीसिया'' परमेश्वर को नहीं भाती, तो ज़्या लाभ होगा? मध्य युग में मसीहियत सज़्ज़वत: ''एक बड़ी कलीसिया'' ही थी। वह एकता होती है। पर ज़्या उस ''एक बड़ी कलीसिया'' ने परमेश्वर को प्रसन्न किया? हम में से कुछ लोग ही मानेंगे कि उसने परमेश्वर को प्रसन्न किया।

इसलिए, कलीसियाओं को इकट्ठा कर लेना फूट की समस्या का समाधान नहीं है। यदि उनसे एक कलीसिया बन भी जाए तो भी यदि वह कलीसिया सच्चाई के अनुसार शिक्षा नहीं देती और आराधना नहीं करती, तो इसमें शामिल होने वाले लोग इसके बिना ही अच्छे थे। एकता की इच्छा करते हुए, हमें *पहले* सत्य की बात मानकर परमेश्वर को स्वीकार्य होने का ध्यान रखना चाहिए और *फिर* एक होने का।

मनुष्यों के सुझाव से एकता पाने के पहले ढंग को ''छतरी का ढंग'' अर्थात सारी साज़्प्रदायिक कलीसियाओं या डिनोमिनेशनों को या ''मसीही लोगों'' को एक ही ''छतरी'' या बहुत बड़े संगठन में लाकर एक करने का विचार कहा जा सकता। इसका भी लाभ नहीं होगा।

मनुष्यों द्वारा एकता के लिए सुझाए गए दूसरे ढंग को ''मिला जुला ढंग'' कहा जा सकता है। यह एक नया उत्पाद बनाने के लिए बहुत से तरल पदार्थों को मिलाने की तरह है। वह पदार्थ एक तो होगा पर अच्छी तरह मिला हुआ नहीं होगा। जैसे अलग-अलग दवाइयों को इकट्ठा कर लेने से आपको कोई सहायता नहीं मिलती, वैसे ही अलग-अलग डिनोमिनेशनों की शिक्षाओं को मिलाकर परमेश्वर को प्रसन्न करने में आपको कोई सहायता नहीं मिलेगी।

बाइबल का ढंग

दूसरा, मनुष्यों के ढंग के विपरीत एकता के लिए बाइबल अपना ढंग बताती है। एकता के लिए हम बाइबल के ढंग की पांच विशेषताएं बता सकते हैं।

बाइबल की एकता परमेश्वर के वचन पर आधारित है। एकता के लिए यीशु की प्रार्थना के संदर्भ में, उसने *वचन* के महत्व पर ज़ोर दिया। यीशु ने कहा कि प्रेरितों को वचन सौंपा गया था (यूहन्ना 17:6, 14), उन्होंने उस वचन को सज़्भाले रखा था (यूहन्ना 17:6), उन्होंने उस वचन के द्वारा पवित्र होना था और वह वचन सत्य था (यूहन्ना 17:17, 19) और संसार ने उन प्रेरितों द्वारा किए गए इसके प्रचार से यीशु में विश्वास लाना था (यूहन्ना 17:20)। स्पष्टतया, यीशु ने अपने अनुयायियों के लिए *परमेश्वर के वचन के सुनने, प्रचार करने और आज्ञा मानने के संदर्भ में* एक होने की इच्छा की थी।

एक होने के लिए हमें परमेश्वर के वचन की बात माननी ज़्यों ज़रूरी है?

यह इसलिए आवश्यक है ज़्योंकि उस अधिकार को माने बिना हम में एकता नहीं हो

सकती। धर्म में अन्तिम अधिकार कहां है? कलीसिया की परम्परा में? या बाइबल में? बाइबल के अनुसार, धर्म में अधिकार केवल बाइबल में ही हैं। केवल यही है जो हमें हर भले काम में पूरी तरह से तैयार करने के लिए परमेश्वर की प्रेरणा से दी गई है (2 तीमुथियुस 3:16, 17)। इसमें ''स्वतन्त्रता की सिद्ध व्यवस्था'' (याकूब 1:25) और ''विश्वास जो पवित्र लोगों को एक ही बार सौंपा गया था'' (यहूदा 3) है। परमेश्वर के वचन से, सत्य की आज्ञा मानने पर हमारा नया जन्म होता है (1 पतरस 1:22) और इसी से हमारा न्याय भी होगा (यूहन्ना 12:48)। धर्म में *अधिकार* बाइबल के पास ही है। जब तक हम इससे सहमत नहीं होते, तब तक एक नहीं हो सकते।

बाइबल के अनुसार एकता मसीह में एकता है। यूहन्ना 17:21 में यीशु ने कहा था, ''जैसा तू हे पिता मुझ में है, और मैं तुझ में हूं, वैसे ही वे ज़ी *हम में* हों ...।'' एक दूसरे के साथ हमारी एकता परमेश्वर और मसीह के साथ एकता ही है। 1 यूहन्ना 1:7 में यूहन्ना इसे स्पष्ट कर देता है: ''पर यदि जैसा वह ज्योति में है, वैसे ही हम भी ज्योति में चलें, तो एक दूसरे से सहभागिता रखते हैं; और उसके पुत्र यीशु का लोहू हमें सब पापों से शुद्ध करता है।'' एकता का लक्ष्य एक दूसरे के साथ एक होना या ''एक दूसरे से सहभागिता'' रखना है। यह कैसे और कब पाई जाती है? इसे ''ज्योति में चलकर'' पाया जाता है, और हमारे पाप क्षमा होने पर मिलती है। यूहन्ना के कहने का भाव यह है कि जब हमारा सम्बन्ध एक दूसरे के साथ और परमेश्वर के साथ भी सही है, तो हमारा एक दूसरे के साथ सम्बन्ध सही होगा और हमारी एक दूसरे के साथ संगति होगी।

अन्य शब्दों में, हम एक दूसरे के साथ एक तभी होंगे जब हम सब मसीह के साथ एक होंगे। पहिये के सारे अरों के पहिये के धुरे से अच्छी तरह जुड़ने पर ही उनका आपस में सही सम्बन्ध होता है। इसी प्रकार जब हम यीशु के साथ सही रीति से जुड़ते हैं जो हमारे विश्वास का कर्ता है तभी हमारा सम्बन्ध एक दूसरे के साथ सही होगा।

बाइबल की एकता कलीसिया के एक भाग के रूप में होने वाली एकता है। यदि एकता मसीह में है, तो हमें यह जानकर हैरानी नहीं होगी कि यह एकता उसकी कलीसिया में है, क्योंकि कलीसिया मसीह की देह है, ''और उसी की परिपूर्णता है, जो सब में सब कुछ पूर्ण करता है'' (इफिसियों 1:23)। यदि कलीसिया मसीह की पूर्णता है, तो हम कलीसिया में हुए बिना मसीह में नहीं हो सकते। इसलिए यदि हम एक होना चाहते हैं तो हमें केवल मसीह में ही एक होना नहीं बल्कि उसकी कलीसिया में भी एक होना आवश्यक है जो उसकी देह है।

कलीसिया एक है। यीशु ने केवल एक ही कलीसिया को बनाने की प्रतिज्ञा की थी (मत्ती 16:18)। जिस कारण, केवल एक ही कलीसिया है (इफिसियों 4:4)। परमेश्वर ने यहूदियों और यूनानियों दोनों को ''क्रूस के द्वारा एक देह बनाकर परमेश्वर से'' मिलाया है (इफिसियों 2:16), जिसका परिणाम यह हुआ कि आज केवल एक ही कलीसिया है अर्थात एक झुंड और एक ही चरवाहा (यूहन्ना 10:16) है। जो लोग कलीसिया में हैं वे उस देह के भाग हैं, और ''अंग चाहे कितने भी हों'' पर देह तो केवल एक ही है (1 कुरिन्थियों

12:12)। अपने अनुयायियों से जिस एकता की मसीह इच्छा करता है वह यीशु मसीह की उस एक कलीसिया में एक होना है।

यह एकता कलीसिया के बाहर पाई जाने वाली एकता नहीं है। न यह डिनोमिनेशनों में रहते हुए हो सकती है। न अलग-अलग कलीसियाओं के संघ में मिलती है। विश्वासी लोग जब नये नियम की एक कलीसिया का भाग बन जाते हैं तो वे भी मसीह में एक होते हैं।

बाइबल की एकता वह एकता है जो आवश्यक है। नया नियम सिखाता है कि हम ''एक ही मन'' हों। पर मसीहियत में रहकर, बाइबल द्वारा ठहराई गई सीमाओं में रहते हुए विचार की भिन्नताएं होने की गुंजाइश रहती है।

पहली सदी की कलीसियाएं शिक्षा पर एकमत होती थीं। पर ढंग के बारे में उनमें कुछ भिन्नताएं अवश्य थीं। उदाहरण के लिए, सभी कलीसियाओं में आराधना प्रभु के दिन तो होती थी, परन्तु प्रभु के दिन वे एक ही समय पर इकट्ठे नहीं होते होंगे। इसके अतिरिज़्त उनमें प्रभु के काम को आगे बढ़ाने के अलग-अलग ढंगों का इस्तेमाल होता होगा।

इसके अलावा, कुछ प्रश्न जैसे कि मूर्तियों के सामने भेंट की गई चीज़ को खाया जाए या नहीं, के उज़र परिस्थितियों के अनुसार दिए जाने थे। इसलिए, हो सकता है कि एक मण्डली के लोग जो भेंटें या ऐसे भोजन खाते हों दूसरी मण्डली के लोग उसे न खाते हों।

युगों से मसीही लोगों में कुछ भिन्नताएं रही हैं- जैसे प्रभु के काम को करने के ''ढंग,'' किसी चीज़ को प्राथमिकता देने या न देने और उसके ढंग, बाइबल की किसी स्पष्ट शिक्षा पर विवादपूर्ण प्रश्नों के बारे में मतभेद हो सकते हैं। ऐसे मतभेद होने पर मसीही लोगों को ज़्या करना चाहिए? उन्हें बिना पूर्ण एकरूपता के एकता के विचार को मान लेना चाहिए। जहां तक विचार की बात है उसमें हमें दूसरों को अपने से अलग विचार रखने की स्वतन्त्रता देनी ही चाहिए।

परन्तु, विश्वास के मामलों में नये नियम के मसीहियों में एकता थी। मसीही लोग विचार के प्रश्नों पर तो अलग हो सकते थे, परन्तु वे सभी मसीहियत की महत्वपूर्ण बातों पर एकमत होते थे कि मसीही बनने के लिए ज़्या करना आवश्यक है, प्रभु की कलीसिया में मसीही के रूप में काम और आराधना ऐसे करनी है और मसीही जीवन कैसा होना चाहिए।

बाइबल के अनुसार होने वाली एकता ऐसी एकता है जो सही व्यवहार से ही बनाई जाती है। मसीह की आज्ञा मानने के द्वारा एक बार उसमें एक हो जाने और उसकी कलीसिया का भाग बन जाने के बाद, जो एक चीज़ रह जाती है वह है उचित व्यवहार के द्वारा एकता को बनाए रखना।

बाइबल द्वारा बताई गई एकता खत्म हो सकती है। नये नियम के समयों में, विश्वास करने वाले सब लोग एक थे। वे उन्हीं बातों को मानते और सिखाते थे और एक ही कलीसिया में थे। परन्तु फिर भी उन्हें फूट से बचाने और एकता बनाए रखने के लिए समझाते रहना आवश्यक था। ज़्यों? ज़्योंकि झगड़े से उनकी वास्तविक एकता को खतरा था।

पौलुस ने इफिसुस के मसीहियों को समझाया: ''सारी दीनता और नम्रता सहित, और

धीरज धरकर प्रेम से एक दूसरे की सह लो। और मेल के बन्ध में आत्मा की एकता रखने का यत्न करो'' (इफिसियों 4:2, 3)। उसने फिलिप्पियों से कहा कि ''मेरा यह आनन्द पूरा करो कि एक मन रहो और एक ही प्रेम, एक ही चिज़, और एक ही मनसा रखो'' (फिलिप्पियों 2:2)। कुलुस्सियों से उसने आग्रह किया, ''और इन सब के ऊपर प्रेम को जो सिद्धता का कटिबन्ध है बान्ध लो'' (कुलुस्सियों 3:14)। हमें इसी संदेश की आवश्यकता है।

सैद्धांतिक रूप में मसीह की कलीसिया के सब लोग एक हैं। ये आयतें कहती हैं कि एक होने के कारण हमें ऐसे ही काम करने चाहिए जैसे हम एक ही हों। परमेश्वर के वचन के अनुसार एक होना आवश्यक है। परन्तु उन व्यवहारों को जिनसे चिंता, सहानुभूति और तरस में एक होने अर्थात ऐसा व्यवहार पैदा होता हो जो दीनता, विनम्रता, धीरज, सहनशीलता, क्षमा, स्नेह, नि:स्वार्थ और मसीह के मन को उत्पन्न करता है उत्पन्न करना भी उतना ही आवश्यक है! सबसे बढ़कर हमें प्रेम के लिए कोशिश करनी चाहिए, ज़्योंकि प्रेम ''सिद्धता का कटिबन्ध है'' (कुलुस्सियों 3:14)।

सारांश

बाइबल के अनुसार एकता अलग-अलग समूहों का सहयोग करना ही नहीं है और न ही यह एकता मनुष्यों के विचारों से समझौता करने से हो सकती है।

बल्कि बाइबल के अनुसार की एकता तो: (1) *परमेश्वर के वचन पर आधारित ...* (2) *मसीह में पाई जाने वाली ...* (3) *कलीसिया के भाग के रूप में ...* (4) *और एकता के लिए आवश्यक ...* (5) *उचित व्यवहार से बनाई रखी जाने वाली एकता है।*

एकता के लिए आप ज़्या योगदान दे सकते हैं? किसी भी पहलू से इस पर नज़र डालने पर, *मसीही बनने के लिए* अपने पापों की क्षमा के लिए *विश्वास और आज्ञाकारिता के द्वारा* मसीह में *बपतिस्मा लेना* आवश्यक था।

मसीह के अधिकार और उसके वचन को ग्रहण करने के लिए *आपको बपतिस्मा लेना आवश्यक है* (मत्ती 28:18-20)।

यीशु में विश्वास करने के बाद, मसीह में आने के लिए *आपको बपतिस्मा लेना आवश्यक है* (गलातियों 3:26-28)।

उस एक कलीसिया में आने के लिए जिसमें मसीही लोग एक होते हैं, *आपके लिए बपतिस्मा लेना आवश्यक है* (1 कुरिन्थियों 12:13)।

आपके लिए बपतिस्मा लेना आवश्यक है ज़्योंकि बपतिस्मा निश्चित रूप से मसीहियत की एक आवश्यक शर्त है। बपतिस्मा मसीह की शर्त है (मरकुस 16:15, 16) और पापों की क्षमा पाने के लिए आवश्यक है (प्रेरितों 2:38)। यह इफिसियों 4 अध्याय में मिलने वाले सात ''एक'' में से एक है।

मसीह में विश्वास करने और अपने पापों से मन फिराने के बाद, *बपतिस्मा लेने के बाद,* आपको मसीह और उन सब लोगों के साथ जो उसके अनुयायी हैं, मिला लिया जाएगा। मसीही एकता को बढ़ाने के लिए पहला कदम यही है। फिर आप अपने भाइयों से

प्रेम करना सीखकर कलीसिया में एकता को बनाए रख सकते हैं। और आप एक हुई मसीह की उस देह का भाग बनने के लिए दूसरों को प्रोत्साहन दे सकते हैं।

किसी ने कहा है, ''एकता हमारा बल है, फूट हमारा नाश है।'' हम सबके लिए एकता के महत्व को समझना आवश्यक है और बाइबल के अनुसार एकता को ढूंढ़ने का यही समय है। जब हम बाइबल के अनुसार एक होंगे, तो हम सामर्थी *होंगे।* अलग – अलग रहकर हमारा नाश हो जाएगा।